उच्चतर
शिक्षा मनोविज्ञान

डॉ मुहम्मद सुलैमान

सीखने के सिद्धान्त
(Theories of Learning)

सीखने के सम्बन्ध में एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह है कि हम कैसे सीखते हैं। यह ठीक है कि व्यक्ति अपने जीवन में हमेशा कुछ-न-कुछ सीखता ही रहता है, परन्तु समस्या यह है कि व्यक्ति क्या सीखता है और कैसे सीखता है? इन समस्याओं के समधान के सम्बन्ध में कई प्रकार के सिद्धान्त मिलते है जिनमें निम्नलिखित चार सिद्धान्त मूलतः महत्त्वपूर्ण हैं:—

1. पावलव का अनुकूलन-सिद्धान्त (Pavlov's Conditioning Theory)
2. थॉर्नडाइक का प्रयत्न और भूल-सिद्धान्त (Thorndike's Trial and Error Theory)
3. स्किनर का शिक्षण सिद्धान्त (Skinner's Theory of Learning)
4. कोहलर का सूझ-सिद्धान्त (Kohler's Insight Theory)

1. पावलव का अनुकूलन-सिद्धान्त
(Pavlov's Conditioning Theory)

इस सिद्धान्त का प्रतिपादन *पावलव (Pavlov)* ने 1904 के लगभग किया। पावलव रूस का एक प्रसिद्ध शरीरशास्त्री (physiologist) था। उसने दैनिक जीवन के निरीक्षणों के आधार पर बताया कि हमारे सामने जब कोई उत्तेजना उतस्थित होती है तो उसके प्रति हम स्वभावतः एक विशेष प्रकार की प्रतिक्रिया करते हैं। इस प्रकार हर उत्तेजना का सम्बन्ध एक विशिष्ट स्वाभाविक प्रतिक्रिया से होता है। परन्तु बाद में साहचर्य (association) के कारण उस स्वाभाविक प्रतिक्रिया का सम्बन्ध उस स्वाभाविक उत्तेजना से सम्बद्ध दूसरी समान अस्वाभाविक उत्तेजनाओं के साथ भी स्थापित हो जाता है। इसे ही सम्बन्ध प्रत्यावर्तन-प्रक्रिया अथवा अनुकूलन कहते हैं। दूसरे शब्दों में, *अनुकूलन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा स्वाभाविक प्रतिक्रिया का सम्बन्ध किसी अस्वाभाविक उत्तेजना के साथ स्थापित हो जाता है।*[1]

पावलव द्वारा किया गया प्रयोग

पावलव ने एक भूखे कुत्ते पर प्रयोग किया। कुत्ते को एक ध्वनि नियंत्रित प्रयोशाला (sound proof laboratory) में इस प्रकार रखा गया कि वह आराम से तो रहे पर इधर-उधर ऊछल-कूद न कर सके। उसके गलफड़े में एक विशेष प्रकार का यंत्र लगा दिया गया जिससे कुत्ते के मुँह से टपकती हुई लार को मापा जा सकता था। आवश्यक व्यवस्था कर लेने के बाद प्रयोग शुरू किया गया। पहले घंटी बजाई गई और तीस सेकण्ड के बाद कुत्ते के सामने भोजन रख दिया गया। भोजन देखते ही कुत्ते के मुँह से लार टपकने लगी। इसी क्रिया को कई बाद दुहराया गया। बाद में देखा गया कि घंटी की आवाज सुनते ही बिना भोजन देखे कुत्ते के मुँह से लार टपकने लगी। इस प्रकार कुत्ते ने घंटी के प्रति लार गिराना सीख लिया।

यदि इस प्रयोग पर ध्यान दिया जाये तो पावलव का विचार स्पष्ट हो जाता है। पहले कुत्ता आवाज सुनता था और भोजन देखकर लार गिराता था अर्थात् लार स्राव (स्वाभाविक प्रतिक्रिया) का सम्बन्ध भोजन (स्वाभाविक उत्तेजना) से था, परन्तु बाद में कुत्ते ने घंटी की आवाज पर ही लार गिराना सीख लिया अर्थात् लार-स्राव का सम्बन्ध घंटी की आवाज (अस्वाभाविक उत्तेजना) से हो गया।

पावलव के इस विचार का समर्थन अन्य मनोवैज्ञानिकों के द्वारा किये गये प्रयोगों से भी होता है। *वाटसन (Watson), मारक्विस (Marquis)* आदि मनोवैज्ञानिकों ने मनुष्यों पर प्रयोग करके सिद्ध किया कि जानवरों की तरह मनुष्य भी अनुकूलन द्वारा सीखते हैं।

1. *"Conditioning is a process through which unconditioned response is being attached to a conditioned stimulus."* —Author

अनुकूलन द्वारा सीखने की विशेषताएँ (*Features or Characteristics of Learning by Conditioning*)

सम्बन्ध प्रत्यावर्तन द्वारा सीखने की कुछ खास विशेषताएँ हैं जिनकी ओर पावलव ने ध्यान आकृष्ट किया है। वे निम्नलिखित हैं:—

(i) आवश्यकता *(Need)*—अनुकूलन द्वारा सीखने के लिए प्राणी में सीखने की आवश्यकता या इच्छा का होना जरूरी है। यदि पावलव का कुत्ता भूखा न होता तो घंटी के प्रति लार गिरना कदापि नहीं सीखता।

(ii) प्रबलन *(Reinforcement)*—प्रबलन का तात्पर्य उस वस्तु से है जिससे आवश्यकता की पूर्ति होती है। पावलव के प्रयोग में भोजन एक प्रबलन था जिसके कारण कुत्ते ने घंटी के प्रति लार गिराना सीखा।

(iii) नियंत्रित वातावरण *(Controlled environment)*—अनुकूलन द्वारा सीखने के लिए वातावरण का नियंत्रित होना भी जरूरी है। प्रयोगशाला में अस्वाभाविक उत्तेजना से मिलती-जुलती दूसरी वस्तुओं का अभाव होना चाहिए ताकि प्राणी उसी विशेष अस्वाभाविक उत्तेजना के प्रति एक खास स्वाभाविक प्रतिक्रिया करना सीख सके।

(iv) पुनरावृत्ति *(Repetition)*—अनुकूलन के लिए स्वाभाविक उत्तेजना तथा अस्वाभाविक उत्तेजना का एक साथ कई बार दुहराया जाना भी आवश्यक है। घंटी की आवाज के साथ बार-बार भोजन प्रस्तुत नहीं किया जाता तो कुत्ता घंटी के प्रति लार गिराना नहीं सीख पाता।

(v) उत्तेजनाओं का क्रम *(Sequence of stimuli)*—पावलव ने अपने प्रयोगों के आधार पर बताया कि स्वाभाविक उत्तेजना के पहले अस्वाभाविक उत्तेजना देने से सम्बन्ध प्रत्यावर्तन या अनुकूलन जल्दी स्थापित हो जाता है। इसके विपरीत, स्वाभाविक उत्तेजना के बाद अस्वाभाविक उत्तेजना देने से सम्बन्ध जल्दी स्थापित नहीं होता है।

(vi) समय अन्तराल *(Time interval)*—अस्वाभाविक उत्तेजना और अस्वाभाविक उत्तेजना के बीच समय-अन्तराल कम होने से अनुकूलन शीघ्र ही स्थापित हो जाता है। पावलव ने 30 सेकण्ड समय अन्तराल को आदर्श माना है।

(vii) सामान्यीकरण *(Generalization)*—अनुकूलन की एक विशेषता यह भी है कि जब व्यक्ति एक खास अस्वाभाविक उत्तेजना के प्रति कोई स्वाभाविक प्रतिक्रिया करना सीख लेता है तो फिर वह उस उत्तेजना से मिलती-जुलती सभी उत्तेजनाओं के प्रति वही प्रतिक्रिया करने लगता है। **वाटसन** के प्रयोग में एक बच्चा को जब उजले खरगोश से डरना सिखलाया गया तो वह बाद में सभी .उजली चीज जैसे—रूई, दूध आदि से डरने लगा। बालकों के शिक्षण में यह विशेषता अधिक पाई जाती है।

(viii) भेदीकरण *(Differentiation)*—सामान्यकीरण के साथ-साथ भेदीकरण भी अनुकूलन का एक आवश्यक गुण है। इसका अर्थ यह हुआ कि जिस अस्वाभाविक उत्तेजना के प्रति प्राणी कोई प्रतिक्रिया करना सीख लेता है, उससे भिन्न उत्तेजनाओं के प्रति वह उस प्रकार की प्रतिक्रिया नहीं करता। पावलव के कुत्ते ने उस आवाज पर लार नहीं गिरायी जो घंटी की आवाज से बिलकुल भिन्न थी। अतः सामान्यीकरण का आधार उत्तेजनाओं के बीच समानता (similarity) है जबकि भेदीकरण का आधार उनके बीच भिन्नता (dissimi larity) है।

(ix) विलोप *(Extinction)*—अनुकूलन के स्थापित हो जाने के बाद स्वाभाविक उत्तेजना या प्रबलन (reinformcemt) के लगातार अभाव होने पर सम्बन्ध-विच्छेद हो जाता है। जब कुत्ते को बहुत देर तक भोजन नहीं दिया गया तो उसने घंटी की आवाज पर लार गिराना छोड़ दिया।

अनुकूलन सिद्धान्त का शैक्षिक आशय एवं मूल्यांकन *(Educational Implications and Evaluation of Conditioning Theory)*

बालकों की शिक्षा में अनुकूलन सिद्धान्त का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसके द्वारा बच्चे अधिक सीखते है। पावलव ने अपने प्रयोगों के आधार पर यह स्पष्ट कर दिया है कि बालकों के आदत-निर्माण (habit-formation), अनुशासन (discipline) तथा सदाचार के विकास में अनुकूलन का प्रमुख हाथ रहता है। इसी तरह बालकों के असामान्य तथा अवांछनीय व्यवहार के निराकरण में भी इस सिद्धान्त से बड़ी सहायता मिलती है। **पावलव** ने इन सारी बातों की ओर संकेत करते हुए स्वयं कहा है, *''विभिन्न प्रकार की आदतें जो किसी प्रकार के प्रशिक्षण, शिक्षा तथा अनुशासन पर आधारित हैं वे अनुकूलन की एक लम्बी शृंखला मात्र है।''*[1]

लेकिन, इस सिद्धान्त की अपनी सीमाएँ हैं जिससे इसकी उपयोगिता सीमित हो जाती है और शैक्षिक दृष्टि से इसका महत्त्व घट जाता है। यहाँ इसके विभिन्न अवगुणों का वर्णन कर देना अपेक्षित है:—

(i) *फ्रैन्ज (Franz)* ने इस सिद्धान्त की आलोचना करते हुए कहा कि इसके द्वारा सीखना बहुत ही कठिन है। कारण यह है कि इसके लिए बिल्कुल नियंत्रित वातावरण की आवश्यकता होती है जो साधारणतः उपलब्ध नहीं होता है।

(ii) *रेजरन (Razran)* ने इस सिद्धान्त का खंडन करते हुए लिखा है कि सभी तरह के बालकों के शिक्षण की व्याख्या इसके द्वारा सम्भव नहीं है। प्रौढ़ एवं बुद्धिमान बालकों के जटिल शिक्षणों की व्याख्या इस सिद्धान्त से असम्भव है। केवल छोटे-छोटे बच्चों और मन्द बुद्धि के बालकों के सीखने की व्याख्या ही यह सिद्धान्त कर पाता है।

(iii) सम्बन्ध-प्रत्यावर्तन सिद्धान्त के द्वारा जो शिक्षण प्राप्त होता है, वह अस्थाई होता है। प्रबलन (reinforcement) के अभाव में कुछ समय के बाद वह समाप्त हो जाता है।

(iv) इस सिद्धान्त की एक खामी यह भी है कि इसमें सीखने वाले की बुद्धि, अभिरुचि, मनोवृत्ति आदि की उपेक्षा की गई है।

(v) इस सिद्धान्त का एक दोष यह है कि यह अभ्यास (practice) को ही सीखने का एक मात्र आधार मानता है, परन्तु व्यावहारिक जीवन में कुछ शिक्षण ऐसे भी देखे जाते है जहाँ अभ्यास की जरूरत नहीं होती है। बिजली छूने से या जहर खाने से आदमी मर जाता है, इसे सीखने के लिए अभ्यास की जरूरत नहीं होती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अनुकूलन सिद्धान्त द्वारा सभी प्रकार के शिक्षणों की व्याख्या सम्भव नहीं है। बच्चों के कुछ ही शिक्षणों की व्याख्या इसके द्वारा हो पाती है।

2. थॉर्नडाइक का प्रयत्न तथा भूल सिद्धान्त
(Thorndike's Trial and Error Theory of Learning)

प्रयत्न तथा भूल-सिद्धान्त का प्रतिपादन **थॉर्नडाइक** (*Thorndike*, 1898) ने किया। यों

1. *"Different kinds of habits based on training, education and discipline of any sort are nothing but a long chain of conditioned reflexes."* —Pavlov

तो सीखने में प्रयत्न तथा भूल की चर्चा सबसे पहले *बेन* तथा *मार्गन* (*Bain* and *Morgan*) ने की परन्तु प्रयोगों के आधार पर इसे वैज्ञानिक रूप देने का श्रेय थॉर्नडाइक को ही है। इसलिए, इस सिद्धान्त को थॉर्नडाइक का सिद्धान्त कहा जाता है। इस सिद्धान्त के अनुसार व्यक्ति किसी विषय को प्रयन्त तथा भूल के आधार पर सीखता है। आरम्भ में भूल अधिक होती है, परन्तु अभ्यास के कारण धीरे-धीरे भूल की संख्या कम होती जाती है और अन्त में व्यक्ति किसी विषय को बिना भूल के ही बहुत थोड़े समय में सीख जाता है।

थॉर्नडाइक ने अपने विचार को प्रमाणित करने के लिए कुत्ते, बिल्ली, चूहे आदि जानवरों पर अनेक प्रयोग किये। कुछ प्रयोग मनुष्य पर भी किये। यहाँ हम केवल दो मुख्य प्रयोगों का वर्णन करना चाहेंगे।

भ्रान्ति-बक्स सम्बन्धी प्रयोग ***(Puzzle Box Experiment)***

थॉर्नडाइक का यह प्रयोग एक बिल्ली पर हुआ। बिल्ली को 24 घंटों तक भूखा रखा गया। फिर, उसे एक भ्रान्ति-बक्स में बन्द कर दिया गया। बक्स में एक स्विच लगा हुआ था जिसको दबाने पर बक्स का दरवाजा खुल जाता था। बक्स के बाहर इतनी दूरी पर भूनी हुई मछली रख दी गयी कि बिल्ली उसे देख तो सके परन्तु उसका हाथ या पैर वहाँ तक पहुँच न सके।

अतः बिल्ली के सामने समस्या यह थी कि दरवाजा खोलकर मछली को प्राप्त कर अपनी भूख मिटाये। देखा गया कि बिल्ली ने बिना सोचे-समझे उछल-कूद करना शुरू किया। कभी वह बक्स को दाँत से काटती, कभी उस पर पंजा मारती और कभी बक्स की दरार से सिर या पंजा बाहर निकालने का प्रयत्न करती। लेकिन उसका सारा प्रयत्न व्यर्थ सिद्ध होता। इसी बीच अकस्मात (accidentally) उसका पंजा स्विच पर पड़ गया जिससे दरवाजा खुल गया और उसने मछली प्राप्त कर ली। फिर, उसे उसी बक्स में बन्द कर दिया गया। उसने पहले की तरह व्यर्थ हरकतें (random movements) शुरू की और संयोगवश उसका पंजा स्विच पर पड़ा जिससे दरवाजा खुल गया। इसी क्रिया को कई बार दुहराने के बाद देखा गया कि बिल्ली ने अन्त में दरवाजा खोलना सीख लिया। अब वह व्यर्थ हरकतें नहीं करती बल्कि सीधे जाकर स्विच दबा देती जिससे दरवाजा खुल जाता। इस प्रकार उसने प्रयत्न तथा भूल के आधार पर दरवाजा खोलना सीख लिया।

भूल-भुलैया सम्बन्धी प्रयोग ***(Maze Learning Experiment)***

थॉर्नडाइक का दूसरा महत्त्वपूर्ण प्रयोग चूहे पर हुआ था। एक भूखे चूहे को भूल-भुलैया के प्रवेश-द्वार (entrance) पर छोड़ दिया गया और भूल-भुलैया के बीच में पनीर रख दिया गया। पनीर तक पहुँचने का सिर्फ एक ही सही रास्ता था और शेष सभी रास्ते गलत थे, जिन्हें अन्ध-पथ (blind alleys) कहते हैं। देखा गया कि आरम्भ में चूहे को पनीर तक पहुँचने में बहुत-से गलत रास्तों से गुजरना पड़ा। लेकिन, वह धीरे-धीरे गलत रास्तों को छोड़ता गया और अन्त में उसने सही रास्ते से होकर पनीर तक जाना सीख लिया। स्पष्टतः चूहे ने भी बिल्ली की तरह प्रयत्न और भूल के आधार पर अपनी समस्या का समाधान सीखा।

प्रयत्न और भूल द्वारा सीखने की विशेषताएँ ***(Features or Characteristics of Learning by Trial and Error)***

थॉर्नडाइक के द्वारा किए गए उपर्युक्त प्रयोगों के विश्लेषण से प्रयत्न और भूल द्वारा सीखने की निम्नांकित विशेषताएँ स्पष्ट होती हैः—

(i) प्रणोदन *(Drive)*—सीखने के लिए प्राणी में प्रणोदन का होना आवश्यक है। यदि

थॉर्नडाइक की बिल्ली भूखी न होती तो वह दरवाजा खोलने का प्रयास नहीं करती और इसलिए अपनी समस्या का समाधान भी नहीं सीख पाती।

(ii) उद्देश्यरहित क्रियाएँ *(Random movements)*—प्रयत्न तथा भूल सिद्धांत की प्रमुख विशेषता यह है कि इसके अनुसार सीखते समय प्राणी व्यर्थ क्रियाएँ करता रहता है। ऐसी क्रियाओं का सम्बन्ध समस्या के समाधान से नहीं होता है। थॉर्नडाइक की बिल्ली का बक्स के भीतर उछल-कूद करना या चूहे का भूल-भुलैया के अन्दर गलत रास्तों से गुजरना, व्यर्थ क्रियाएँ है।

(iii) आकस्मिक सफलता *(Accidental success)*—इस सिद्धान्त के अनुसार सीखते समय प्राणी को आकस्मिक या संयोगवश सफलता मिल जाती है। गलत क्रियाओं को करने के क्रम में संयोग से प्राणी सही प्रतिक्रिया (right response) कर बैठता है और इस तरह उसे अकस्मात सफलता मिल जाती है। उदाहरणार्थ—उछल-कूद करते-करते संयोगवश बिल्ली का पंजा स्विच पर पड़ा और दरवाजा खुल गया तथा भोजन मिल गया।

(iv) सही प्रतिक्रिया का चुनाव *(Selection of right response)*—प्रयत्न और भूल द्वारा सीखने की एक विशेषता यह है कि प्राणी सही प्रतिक्रिया को चुन लेता है और अभ्यास के कारण उसी क्रिया को सीख लेता है। जैसे—बिल्ली ने सिर्फ बटन दबाने की क्रिया (सही प्रतिक्रिया) को सीखा।

(v) गलत प्रतिक्रियाओं का निष्कासन *(Elimination of wrong responses)*—इस सिद्धान्त की एक विशेषता यह है कि प्रारंभ में प्राणी अधिक भूल करता है परन्तु अभ्यास के कारण धीरे-धीरे भूलें कम हो जाती है या बिल्कुल खत्म हो जाती है। जैसे—बिल्ली ने गलत क्रियाओं (उछलना, कूदना, पंजा मारना आदि) को छोड़ दिया।

(iv) सही प्रतिक्रिया का स्थिरीकरण *(Fixation of right response)*—जब प्राणी गलत तथा सही प्रतिक्रियाओं में अन्तर समझ जाता है तो वह गलत क्रिया करना छोड़ देता है और सिर्फ सही क्रिया ही करने लगता है। इस प्रकार प्राणी में सही प्रतिक्रिया का स्थिरीकरण हो जाता है।

प्रयत्न तथा भूल सिद्धान्त का शैक्षिक आशय एवं मूल्यांकन *(Educational Implications and Evaluation of Trial and Error Theory)*

शैक्षिक दृष्टिकोण से यह सिद्धान्त काफी महत्त्वपूर्ण है। बालकों के शिक्षण में अभ्यास का बहुत ही महत्त्वपूर्ण स्थान है। खास कर छोटे-छोटे बालक प्रयत्न तथा भूल द्वारा ही अपने पाठ्यक्रम को सीख पाते हैं। जो बच्चे मन्द बुद्धि के होते है उनके लिए तो अभ्यास ही सीखने का एक मात्र सहारा बन जाता है। वाचिक शिक्षण (verbal learning) से ज्यादा क्रियात्मक शिक्षण (motor learning) में अभ्यास की आवश्यकता होती है। तैरना सीखने, साइकिल चलाना सीखने या टाइप करना सीखने के लिए अभ्यास कितना जरूरी है, यह कहने की आवश्यकता नहीं। इसका मतलब यह नहीं कि वाचिक शिक्षण के लिए अभ्यास जरूरी नहीं है। सच तो यह है कि क्रियात्मक शिक्षण की तरह वाचिक शिक्षण का आधार भी बहुत अंशों में प्रयत्न तथा भूल है, अन्तर केवल मात्रा का है। विभिन्न प्रकार के कौशलों (skills) के अर्जन में इस सिद्धान्त का महत्त्वपूर्ण हाथ है। इसके अतिरिक्त इस सिद्धान्त की पृष्ठभूमि में शिक्षाशास्त्रियों को यह समझने का मौका मिला कि बालकों की समुचित शिक्षा के लिए प्रेरणा (motivation) भी आवश्यक है। *थॉर्नडाइक* ने प्रमाणित किया कि बच्चों की शिक्षा में दण्ड की अपेक्षा पुरस्कार अधिक लाभप्रद होता है।

फिर भी, इस सिद्धान्त में कई प्रकार की ***खामियाँ*** नजर आती हैः—

(i) पहली खामी यह है कि यह सिद्धान्त सीखने में प्राणी की सूझ या बुद्धि की उपेक्षा करता है। वास्तव में सूझ तथा बुद्धि सीखने के आवश्यक तत्त्व है। *टौलमैन (Tolman)* ने इस सिद्धान्त का खण्डन करते हुए लिखा है कि गलत प्रतिक्रिया या भूलें निरर्थक नहीं होतीं; क्योंकि उनसे सही प्रतिक्रिया की ओर मुड़ने में प्राणी को सहायता मिलती है। इसलिए, टौलमैन ने ऐसी भूलों को अच्छी भूलें (good errors) कहा है। प्रायः हम पाते है कि बालक इसी आधार पर अपनी शैक्षिक समस्याओं का समाधान करना सीखते है। कहा भी गया कि ठेस लगने से अक्ल खुलती है।

(ii) एक त्रुटि यह है कि यह यांत्रिक (mechanical) विधि है। इसके अनुसार प्रयत्न या अभ्यास के कारण उत्तेजना और सही प्रतिक्रिया के बीच सम्बन्ध स्थापित होता जाता है। इसे उत्तेजना-प्रतिक्रिया-सम्बन्ध (S-R connectionism) कहते हैं। लेकिन सदा ऐसा नहीं होता है। जहर खाने से आदमी मर जाता है, बिजली छूने से शॉक (shock) लगता है, आग से हाथ जलता है, आदि शिक्षणों के लिए अभ्यास की जरूरत नहीं पड़ती है। यदि अभ्यास करना पड़ता तब तो सीखने से पहले सीखने वाला ही चल बसता।

उपर्युक्त त्रुटियों के बावजूद यह सिद्धान्त आज भी जीवित है। *हिलगार्ड* एवं *बोवर* (*Hilgard* and *Bower*, 1975) ने कहा है कि *सार्थक सिद्धान्त अपने आलोचकों की गोद में जीवित रहता है जबकि निरर्थक सिद्धान्त उपेक्षित होकर मर जाता है। इस कसौटी पर थॉर्नडाइक के सिद्धान्त का मूल्यांकन किया जाये तो स्वीकार करना होगा कि यह सिद्धान्त आज भी सार्थक तथा अर्थपूर्ण है और शोध का केन्द्र शिक्षा के क्षेत्र में भी बना हुआ है।* अतः बालकों की शिक्षा में इस सिद्धान्त के आशयों (implications) को ध्यान में रखना शिक्षकों के लिए आवश्यक है।

3. स्किनर का शिक्षण सिद्धान्त
(Skinner's Theory of Learning)

स्किनर ने 1938 में सीखने के एक सिद्धान्त का प्रतिपादन किया, जिसको प्रवर्तन अनुकूलन सिद्धान्त (Operant Conditioning Theory) अथवा साधनात्मक अनुबन्धन सिद्धान्त (Instrumental Conditioning Theory) कहते है। यह सिद्धान्त पैवलव *(Pavlov*, 1904) के क्लासिकी सिद्धान्त से भिन्न है। दोनों की अभिधारणाओं (postulates) मे अन्तर हैः—

(i) स्कीनर के अनुसार, किसी समस्या का समाधान सीखते समय प्राणी की प्रतिक्रिया प्रबलन (reinforcement) प्राप्त करने में साधनात्मक होती है। जबकि पैवलव के अनुसार प्राणी की प्रतिक्रिया प्रबलन को प्राप्त करने में साधनात्मक नहीं होती है।

(ii) स्किनर के अनुसार प्राणी की प्रतिक्रिया सम्पूर्ण शिक्षण-परिस्थिति में फैली होती है जबकि पैवलव के अनुसार ऐसा नहीं होता है।

(iii) स्किनर के अनुसार शिक्षण परिस्थिति में प्राणी को आंशिक प्रबलन (partial reinforcement) मिलता है जबकि पैवलव के अनुसार पूर्ण प्रबलन (complete reinforcement) मिलता है।

(iv) स्किनर के अनुसार उत्तेजना सामान्यीकरण (stimulus generalization) में प्राणी पहली शिक्षण-परिस्थिति के समान दूसरी शिक्षण परिस्थितियों में पहले सीखी गयी प्रतिक्रिया को दुहराता है, जबकि पैवलव के अनुसार प्राणी उस सीखी गयी प्रतिक्रिया को उस तटस्थ उत्तेजना के समान अन्य उत्तेजनाओं की उपस्थिति में दुहराता है।

स्किनर ने अपनी अभिधारणाओं को सत्यापित करने के लिए उजले चूहे (white rat) पर प्रयोग किया। भूखे चूहे को स्किनर बक्स (Skinner Box) में डाल दिया गया, जिसमें कई लिवर (levers) लगे थे, जिनमें से एक लिवर ऐसा था जिसको दबाने पर उसे भोजन (प्रबलन) मिलता था। जब यह सही लिवर को दबाता था तो उसे प्रबलन मिलता था और जब गलत लिवर को दबाता था तो उसे प्रबलन नहीं मिलता था। देखा गया कि कई प्रयासों के बाद उसने सही लिवर दबा कर प्रबलन (भोजन) प्राप्त करना सीख लिया। इसी प्रकार स्किनर ने कबूतर (pigeon) पर भी प्रयोग किया और अपनी अभिधारणाओं को प्रमाणित किया। इन प्रयोगों के आलोक में **स्कीनर** ने प्रवर्तन अनुकूलन (operant conditioning) की निम्नलिखित विशेषताओं का उल्लेख किया:—

(i) प्रवर्तन अनुक्रिया *(Operant response)*—इस सिद्धान्त के अनुसार शिक्षण परिस्थिति में प्राणी की प्रतिक्रिया या अनुक्रिया सम्पूर्ण शिक्षण परिस्थिति में फैली हुई होती है।

(ii) साधनात्मक अनुक्रिया *(Instrumental response)*—स्कीनर के अनुसार प्राणी का व्यवहार प्रबलन (reinforcement) प्राप्त करने के लिए साधनात्मक होता है। जब वह सही प्रतिक्रिया करता है तो उसे प्रबलन मिलता है और जब गलत प्रतिक्रिया करता है तो प्रबलन प्राप्त नहीं होता है।

(iii) आंशिक प्रबलन *(Partial reinforcement)*—इस सिद्धान्त के अनुसार प्राणी को प्रत्येक प्रयास में प्रबलन नहीं मिलता है। जिस प्रयास में उसका व्यवहार या प्रतिक्रिया सही होता हैं, उसमें प्रबलन मिलता है और जिस प्रयास में उसका व्यवहार या प्रतिक्रिया गलत होती है, उसमें उसे प्रबलन नहीं मिलता है।

(iv) प्रबलन *(Reinforcement)*—इस सिद्धान्त के अनुसार सीखने के लिए प्रबलन आवश्यक है। इसी आधार पर इस सिद्धान्त की गणना प्रबलनवादी सिद्धान्तों (reinforcement theories) में की जाती है।

(v) प्रबलन अनुसूची *(Schedules of reinforcement)*—प्रबलन अनुसूची का अर्थ यह है कि सीखते समय प्राणी को किस रूप में प्रबलन दिया जाए। एक अनुसूची वह है जिसमें प्राणी को प्रत्येक प्रतिक्रिया के बाद प्रबलन दिया जाता है। इसे पूर्ण प्रबलन या सतत प्रबलन (continuous schedule) कहते हैं। दूसरी अनुसूची वह है जिसमें प्राणी को कुछ प्रतिक्रिया में प्रबलन दिया जाता है तथा कुछ प्रतिक्रियाओं में नहीं दिया जाता है। इसे आंशिक प्रबलन या असतत प्रबलन (discontinuous reinforcement) कहते हैं। स्कीनर ने इसी प्रबलन अनुसूची का उपयोग किया।

(vi) प्रणोदन *(Drive)*—इस सिद्धान्त के अनुसार किसी विषय को सीखने अथवा किसी समस्या के समाधान हेतु प्राणी में प्रणोदन का होना आवश्यक है। जैसे—भूख प्रणोदन की उपस्थिति में ही चूहे ने अपनी समस्या का समाधान करना सीखा।

(vii) संगठित रूप देना *(Shaping)*—स्किनर के सिद्धान्त की यह एक महत्त्वपूर्ण विशेषता है। इसका अर्थ यह है कि शुरू में सीखते समय प्राणी का व्यवहार या प्रतिक्रिया असंगठित रहती है। जैसे—स्कीनर बक्स में भूखे चूहे की प्रतिक्रियाएँ असंगठित होती थीं किन्तु प्रबलन के कारण वे क्रमशः संगठित रूप धारण करती गयीं और अन्त में उसने केवल एक सही लीवर को दबाकर प्रबलन प्राप्त करना सीख लिखा।

शैक्षिक आशय एवं मूल्यांकन (*Educational Implications and Evaluation*)

स्किनर के सिद्धान्त की समीक्षा करने से इसके कई शैक्षिक आशयों का उल्लेख मिलता है। इसके शैक्षिक महत्त्व (educational importance) को निम्नलिखित रूपों में देखा जा सकता है:—

(i) यह सिद्धान्त सीखने में प्रबलन को आवश्यक मानता है। अतः इसका आशय शिक्षा के क्षेत्र में यह है कि बच्चों को शिक्षा के प्रति प्रेरित करने के लिए उन्हें उपयुक्त प्रबलन दिया जाए।

(ii) इस सिद्धान्त के अनुसार सकारात्मक प्रबलन (positive reinforcement) अर्थात् पुरस्कार (reward) देने पर वह प्रतिक्रिया प्रबलित होती है और प्राणी उसे सीखता है और नकारात्मक प्रबलन (negative reinforcement) देने पर वह प्रतिक्रिया कमजोर होती है और प्राणी उसे नहीं सीखता है। अतः इसका शैक्षिक आशय यह है कि बालकों को उनके वांछित व्यवहारों के लिए पुरस्कार तथा अवांछित व्यवहार करने पर दण्ड देना चाहिए।

(iii) इस सिद्धान्त का एक शैक्षिक आशय यह भी है कि कक्षा (class room) में कुछ ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए कि शुरू में छात्रों को प्रत्येक सही प्रतिक्रिया पर धनात्मक प्रबलन (positive reinforcement) मिले और बाद में कभी-कभी सही प्रतिक्रिया पर यह प्रबलन नहीं मिले। दूसरे शब्दों में, आरम्भ में सतत् प्रबलन की व्यवस्था की जानी चाहिए तथा इसके बाद असतत प्रबलन की व्यवस्था होनी चाहिए।

(iv) इस सिद्धान्त का एक आशय शिक्षकों के लिए यह है कि वे नियंत्रित किन्तु स्वाभाविक रूप से बच्चों को स्वयं सीखने का अवसर दें। इससे उनमें सीखने की योग्यता सहज रूप से विकसित हो सकेगी।

(v) स्किनर के सिद्धान्त का एक शैक्षिक महत्त्व यह भी है कि इसमें इस बात पर बल दिया गया है कि प्राणी को सम्पूर्ण शिक्षण परिस्थिति में प्रवर्तन अनुक्रिया का अवसर दिया जाना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि शिक्षकों को चाहिए कि वे शिक्षार्थियों को प्रवर्तन तरीके से व्यवहार करने का मौका दें ताकि उनकी शिक्षा समग्र रूप से हो सके।

सीमाएँ (*Limitations*)

स्किनर के सिद्धान्त के कई शैक्षिक महत्त्व का उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। लेकिन, इसमें कुछ त्रुटियाँ भी हैं:—

(i) स्किनर ने अपने सिद्धान्त में दण्ड के महत्त्व को घटा दिया है। लेकिन, आज भी अधिकांश मनोवैज्ञानिक मानते हैं कि बच्चों के अवांछित व्यवहारों को नियंत्रित करने में दण्ड एक आवश्यक उपकरण है।

(ii) इस सिद्धान्त की एक त्रुटि यह भी है कि इसमें उत्तेजना-प्रतिक्रिया सम्बन्ध (S-R connectionism) पर वाह्य रूप से बल दिया गया है। लेकिन बालकों की समुचित शिक्षा के लिए यह आवश्यक है उनकी आंतरिक संरचना (internal structure) को भी समझने का प्रयास करें।

(iii) शिक्षा के दृष्टिकोण से इस सिद्धान्त की यह अभिधारणा भी पूर्णतः सही नहीं है कि केवल अभ्यास करने से ही उत्तेजना-प्रतिक्रियाबन्धन (S—R bond) का निर्माण होता है। वास्तव में किसी विषय को सीखने के लिए सूझ (insight) भी आवश्यक है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि शिक्षण के अन्य सिद्धान्तों की तरह स्किनर का सिद्धान्त भी बालकों की शिक्षा के लिए केवल आंशिक रूप में ही सफल है।

4. कोहलर का सूझ-सिद्धान्त
(Kohler's Insight Theory)

सूझ-सिद्धान्त का प्रतिपादन *कोहलर तथा कोफ्फका* (*Kohlar* and *Koffka*) ने किया। ये दोनों गेस्टाल्टवादी मनोवैज्ञानिक (Gestalt psychologists) थे। उन्होंने शिक्षण में सूझ (insight) पर जोर दिया और बताया कि प्राणी अपनी समस्या को समझ-बूझ कर हल करना सीखता है। समस्या के विभिन्न पहलुओं तथा उनके समाधान के सही मार्ग का बोध हो जाना ही सूझ है। उन्होंने अपने विचार को प्रमाणित करने के लिए कई प्रयोग किए। उनके अधिकांश प्रयोग बन्दरों तथा वनमानुषों पर हुए। हम यहाँ उनके द्वारा किए गए दो प्रयोगों का वर्णन करना चाहेंगे।

छड़ी-समस्या प्रयोग ***(Stick Problem Experiment)***

कोहलर ने सुलतान नामक एक तीव्र बुद्धि के वनमानुष को एक पिंजडे में बन्द कर दिया। वनमानुष भूखा था। पिंजड़े के बाहर इतनी दूरी पर केला रख दिया गया जिसे वह देख सके परन्तु हाथ या पैर से छू न सके। पिंजड़े के भीतर दो छड़ियाँ रख दी गईं जो मिल कर एक बन सकती थीं। अब सुलतान ने केले को पाने के लिए हाथ-पैर फैलाना शुरू किया। लेकिन, केले की दूरी अधिक होने के कारण वह असफल रहा। वह चुपचाप बैठ गया। इसी बीच उसकी नजर छड़ियों पर पड़ी। उसने बारी-बारी से छड़ी के सहारे केले को पाना चाहा, पर सफलता न मिली। तब वह उन छड़ियों से खेलने लगा। इसी बीच अकस्मात् एक छड़ी का छोर दूसरी छड़ी के छोर से मिल गया जिससे दोनों छड़ियाँ मिलकर एक लम्बी छड़ी बन गया। अब सुलतान ने केले की दूरी और छड़ी की लम्बाई पर विचार किया। सहसा उसे सूझ हुई कि लम्बी छड़ी केले तक पहुँच सकती है। फलतः उसने छड़ी के द्वारा केले को अपनी ओर खींच लिया और अपनी भूख मिटाई। दूसरे और तीसरे दिन भी भूखे सुलतान को पिंजड़े में बन्द कर दिया गया। इस बार उसने थोड़े ही समय में दोनों छड़ियों को जोड़कर अपनी समस्या का समाधान सीख लिया।

बक्स-समस्या प्रयोग ***(Box Problem Experiment)***

इस प्रयोग में कोहलर ने भूखे बनमानुष को एक कमरे में बन्द कर दिया और कमरे की छत में केले को इतनी दूरी पर लटका दिया कि उछल-कूद कर वह वहाँ तक नहीं पहुँच सके। कमरे के भीतर इधर-उधर कुछ बक्से रख दिए गए। केला देखते ही बनमानुष ने उछल-कूद शुरू कर दिया परन्तु दूरी अधिक होने के कारण वहाँ तक नहीं पहुँच सका। अब वह चुपचाप बैठ गया। उसकी नजर इधर-उधर पड़े हुए बक्सों पर गई। उसने केले की दूरी को देखा। इस प्रकार वह परिस्थिति को समझने का प्रयास कर रहा था। उसने प्रयोगकर्ता के संकेत को भी समझा, बात उसकी समझ में आ गई। सहसा वह उठा और बक्से पर बक्सा रखकर केले तक पहुँच कर अपनी समस्या का समाधान कर लिया। दूसरे-तीसरे दिन जब उसे फिर केले को उसी परिस्थिति में रख दिया गया तो उसने फौरन बक्से पर बक्सा रख कर अपनी समस्या को हल कर लिया।

सूझ द्वारा सीखने की विशेषताएँ ***(Featurs or Characteristics of Learning by Insight)***

कोलहर के उपर्युक्त दोनों प्रयोगों के विश्लेषण से सूझ द्वारा सीखने की निम्नांकित विशेषताएँ स्पष्ट होती हैं:—

(i) प्रणोदन *(Drive)*—सीखने के लिए प्रणोदन आवश्यक है। यदि बनमानुष में भूख

की प्रेरणा नहीं होती तो वह छड़ियों को जोड़कर या बक्से पर बक्सा रख कर केले को प्राप्त करना नहीं सीख पाता।

(ii) समस्या की छान-बीन *(Perception of the problem)*—प्राणी के सामने जब कोई समस्या उपस्थित होती है तो वह उसको समझने का भरसक प्रयास करता है। समस्यात्मक परिस्थिति (problematic situation) के विभिन्न अंगों को समझने की कोशिश करता है।

(iii) हिचकिचाहट *(Hesitation)*—जब प्राणी अपनी समस्या को पूरी तरह नहीं समझ पाता है तो वह किसी तरह की प्रतिक्रिया करने में हिचकिचाहट का अनुभव करने लगता है। फलतः वह शिथिलता की अवस्था (phambling state) में चला आता है। जैसे—कोहलर का बनमानुष जब उछल-कूद कर छत से लटके केले को न पा सका तो वह चुपचाप बैठ गया।

(iv) अचानक सफलता *(Sudden success)*—सूझ द्वारा सीखने की एक बहुत बड़ी विशेषता यह है कि प्राणी को अचानक सफलता मिल जाती है। वास्तव में प्राणी शिथिलता की अवस्था में भी मानसिक रूप से सक्रिय रहता है। वह अपनी समस्यात्मक परिस्थिति को समझने की कोशिश करता रहता है। ज्यों ही परिस्थिति उसकी समझ में आ जाती है अर्थात् सूझ मिल जाती है, वह सहसा अपनी समस्या को हल कर लेता है।

(v) सहज स्थानान्तरण *(Easy transfer)—यर्क्स (Yerks)* के अनुसार सूझ द्वारा सीखने की एक मुख्य विशेषता यह बताई गई है कि इसमें स्थानान्तरण सहज तथा प्रभावपूर्ण होता है। एक परिस्थिति में जब प्राणी एक विषय को सीख लेता है तो बड़ी आसानी से उसका उपयोग दूसरी परिस्थितियों में भी करता है।

सूझ-सिद्धान्त का शैक्षिक आशय एवं मूल्यांकन *(Educational Implications and Evaluation of Insight Theory)*

शैक्षणिक दृष्टिकोण से यह सिद्धान्त बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। कारण यह कि बालकों के शिक्षण की व्याख्या इसके आधार पर एक बड़ी हद तक हो जाती है। विशेष रूप से प्रतिभाशाली या तेज बुद्धि के बालक प्रायः सूझ के द्वारा ही सीखते हैं। अंकगणित या रेखागणित जैसे विषयों के शिक्षण की व्याख्या इस सिद्धान्त के आधार पर बहुत अंशों में हो जाती है। यहाँ तक कि विभिन्न प्रकार के क्रियात्मक शिक्षणों (motor learnings) में भी सूझ की आवश्यकता होती है। इस सिद्धान्त के आधार पर जो कुछ सीखा जाता है वह अधिक टिकाऊ होता है और उसका स्थानान्तरण भी सहज एवं प्रभावी होता है। यही कारण है कि आधुनिक-शिक्षा-मनोवैज्ञानिकों ने बालकों के शिक्षण में इस सिद्धान्त के उपयोग पर अधिक जोर दिया है। तीव्र बुद्धि के बालकों के शिक्षण के लिए यह सिद्धान्त काफी उपयोगी है।

उपर्युक्त गुणों के होते हुए भी इस सिद्धान्त में निम्नांकित त्रुटियाँ पाई जाती हैं:—

(i) यह सिद्धान्त अभ्यास के महत्त्व की उपेक्षा करता है। इसके अनुसार किसी विषय को सीखने में अभ्यास करने की जरूरत नहीं होती। वास्तव में सूझ के साथ-साथ अभ्यास भी शिक्षण का एक आवश्यक अंग है।

(ii) इस सिद्धान्त के अनुसार सफलता अचानक (suddenly) मिल जाती है। लेकिन, यह वास्तविकता नहीं है। डंकर *(Duncker*, 1945) ने ठीक कहा है कि *प्राणी को सफलता एक क्रम में मिलती है।*[1]

---

1. *"Success is gradual and graduated."* —Duncker, K. 1945

(iii) सूझ सिद्धान्त आंशिक रूप से ही शिक्षण की व्याख्या कर पाता है। कारण यह कि सीखने में सूझ तथा अभ्यास दोनों की आवश्यकता है, अन्तर केवल मात्रा (degree) का होता है। यह दो बातों पर निर्भर है—(i) समस्या की जटिलता तथा (ii) सीखने वाले की बौद्धिक योग्यता।

समीक्षा

प्रयत्न तथा भूल सिद्धान्त और सूझ-सिद्धान्त की अलग-अलग व्याख्या हम कर चुके हैं। इससे ऐसा लगता है कि ये दोनों सिद्धान्त एक-दूसरे के विरोधी (anti-thesis) हैं। वस्तुतः बात ऐसी नहीं है। ये दोनों सिद्धान्त एक-दूसरे के पूरक (supplementary) हैं। कारण यह है कि किसी एक सिद्धान्त से सभी प्रकार के बालकों के सभी तरह के शिक्षणों की संतोषप्रद व्याख्या सम्भव नहीं है। प्रयत्न तथा भूल सिद्धान्त केवल अभ्यास पर जोर देता है और सूझ सिद्धान्त सिर्फ सूझ को ही शिक्षण का आधार मानता है। लेकिन वास्तविकता यह है कि अभ्यास तथा सूझ दोनों शिक्षण के आवश्यक तत्त्व हैं। अतः ये दोनों सिद्धान्त एक-दूसरे की कमी की पूर्ति करते हैं।[1]

सीखने के नियम तथा इसके शैक्षिक उपयोग
(Laws of Learning and Their Educational Applications)

सीखने के तीन प्राथमिक नियम हैं जिनका प्रतिपादन थॉर्नडाइक (Thorndike) ने किया। यहाँ उनका विस्तृत वर्णन किया जाएगा और देखा जाएगा कि बालकों की शिक्षा में उनका क्या महत्त्व है।

तत्परता का नियम
(Law of Readiness)

तत्परता-नियम की चर्चा करते हुए **थॉर्नडाइक** ने बताया कि सीखने के लिए प्राणी का तत्पर होना जरूरी है। प्राणी जब मानसिक रूप से सीखने के लिए तैयार हो जाता है तो वह किसी विषय को आसानी से सीख लेता है। इसके विपरीत, यदि वह सीखने के लिए तत्पर न हो तो किसी विषय का सीखना कठिन हो जाता है। इस नियम के सम्बन्ध में तीन बातें मुँख्य हैं:—

(i) जब व्यक्ति किसी क्रिया को करने के लिए तत्पर होता है तो उस क्रिया को करने से संतुष्टि (statisfaction) मिलती है।

(ii) जब व्यक्ति किसी क्रिया को करने के लिए तत्पर नहीं रहता है तो उस क्रिया को करने से असंतुष्टि (annoyance) मिलती है।

(iii) जब व्यक्ति किसी क्रिया को करने के लिए तत्पर रहता है तो उस क्रिया को नहीं करने से असंतुष्टि मिलती है।

स्पष्ट है कि यह नियम शैक्षिक दृष्टि से काफी महत्त्वपूर्ण है। शिक्षा की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि उसके प्रति बालकों में मानसिक तत्परता हो। स्मरण रहे कि जिस विषय को सीखने के लिए बालक तैयार होता है और उसे वह विषय सीखने दिया जाता है तो उसे आत्म-संतोष होता है। इसके विपरीत, यदि उसे वह विषय सीखने नहीं दिया जाता है अथवा किसी ऐसे विषय को सीखने के लिए बाध्य किया जाता है जिसके प्रति बालक में मानसिक तैयारी नहीं होती है तो उसे असंतोष मिलता है जो बालक की शैक्षिक विफलता का एक प्रधान कारण बनता है।

1. *"Learning by trial and error and learning by insight are not antithesis rather they are supplementary to each other."*

—Duncker, K. 1945